Volume: 4 Issue: 4 Pages: 195-197

राव शेखा एवं शेखावत वंशजों का सांस्कृतिक योगदान (शेखावाटी क्षेत्र के विशेष संदर्भ में)

[*1] हेमन्त सिंह

[*1] शोध छात्र, इतिहास विभाग, जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर, राजस्थान, भारत।

Article Info.
E-ISSN: 2583-6528
Impact Factor (SJIF): 6.876
Peer Reviewed Journal
Available online:
www.alladvancejournal.com

Received: 26/March/2025
Accepted: 28/April/2025

***Corresponding Author**
हेमन्त सिंह
शोध छात्र, इतिहास विभाग, जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर, राजस्थान, भारत।

सारांश:
शेखावत वंश ने सोलहवीं शताब्दी से लेकर देश की स्वतंत्रता तक राजस्थान के पूर्वी भाग पर शासन किया था। इस वंश का शेखावाटी क्षेत्र पर 500 से अधिक वर्षों तक शासन रहा है। प्रारम्भिक शासकों ने आमेर शासकों के प्रति निष्ठा दिखाई, लेकिन राव शेखाजी ने वि.स. 1471 में स्वयं को एक स्वतंत्र शासक घोषित कर दिया। शेखावाटी क्षेत्र राजस्थान के उत्तरी-पूर्वी भाग में स्थित है। इसकी भौगोलिक स्थिति 27° 20 से 28° 34′ उत्तरी अक्षांश एवं 74° 41' पूर्व से 76° 06' पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है। राव शेखा एवं शेखावत शासकों द्वारा इस क्षेत्र में दूर्गों, नहरों, बांधों एवं जलाशयों का निर्माण करके सांस्कृतिक योगदान प्रदान किया गया। शेखावाटी क्षेत्र में अनेक प्रसिद्ध मंदिरों का निर्माण कराया गया। इन सभी स्थलों का ऐतिहासिक महत्व वर्तमान में भी हैं।

मुख्ये शब्द: सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, जमींदारी, रियासतों, जागीरदार, वंशजों, स्तुतियां, डिंगल भाषा, दौहे, सोरठे, ब्लू पॉटरी आदि ।

प्रस्तावना:
शेखावत वंश महान राजपूत योद्धा राव शेखाजी के वंशज हैं। आमेर के कछवाहा राजपूतों के सभी 65 उप वंशों में शेखावत प्रमुख हैं। शेखावत वंश ने सोलहवीं शताब्दी से लेकर देश की स्वतंत्रता तक राजस्थान के पूर्वी भाग पर शासन किया था। इस वंश का शेखावाटी क्षेत्र पर 500 से अधिक वर्षों तक शासन रहा है। प्रारम्भिक शासकों ने आमेर शासकों के प्रति निष्ठा दिखाई, लेकिन राव शेखाजी ने वि.स. 1471 में स्वयं को एक स्वतंत्र शासक घोषित कर दिया। शेखावाटी क्षेत्र राजस्थान के उत्तरी-पूर्वी भाग में स्थित है। इसकी भौगोलिक स्थिति 27 ° 20 ´ से 28° 34′ उत्तरी अक्षांश एवं 74° 41' पूर्व से 76°06′ पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है। इस प्रदेश का कुल क्षेत्रफल 13,784 वर्ग किमी है। शेखावाटी की विशेषता रही है कि सन् 1730 से स्वतंत्रता तक यह क्षेत्र के राव शेखा के वंशजों के अधीन रहा है। परंपरागत रूप से शेखावतों में जमींदारी वर्ग ही प्रचलित थे ।
काल में जयपुर और जोधपुर जैसी रियासतों के राजपूत शासक उनके भव्य दरबारों हेतु प्रसिद्ध थे। राजपूत महाराजा प्रायः सज-धज युक्त महलों में भव्यता से निवास करते थे। यद्यपि, भारत की स्वतंत्रता के पश्चात्, यहाँ के युवराज एवं शासक अपनी उपाधियों एवं विशेषाधिकारों से वंचित हो गए।

शेखावाटी क्षेत्र राजस्थान के उत्तरी-पूर्वी भाग में स्थित है। इसकी भौगोलिक स्थिति 27° 20´ से 28° 34′ उत्तरी अक्षांश एवं 74° 41' पूर्व से 76°06′ पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है। इस प्रदेश का कुल क्षेत्रफल 13,784 वर्ग किमी है। शेखावाटी की विशेषता रही है कि सन् 1730 से स्वतंत्रता तक यह क्षेत्र के राव शेखा के वंशजों के अधीन रहा है। शार्दुलसिंह की मृत्यु के बाद पांचों पुत्रों में बंटवारा हुआ और कालान्तर में पीढ़ी दर पीढ़ी बंटवारे होते रहे। स्थिति यहां तक पंहुची की एक ही गांव की कृषि भूमि पर भाई बंटवारे के हिसाब से कई जागीरदार काबिज हो गये ।

भाषा- शेखावत राजपूतों द्वारा उस क्षेत्र की भाषा बोली जाती है, जहाँ उनका निवास होता है। इनके द्वारा राजस्थानी की प्रचलित बोलियों अथवा भाषाओं में से एक का प्रयोग किया जाता है, जिसका स्वरूप राष्ट्रभाषा हिन्दी के समान ही होता है। कुछ प्रचलित राजस्थानी भाषाओं अथवा बोलियों में जयपुर में प्रयुक्त होने वाली जयपुरी और मारवाड़ में बोली जाने वाली मारवाड़ी के उदाहरण दिए जा सकते हैं। शेखावाटी क्षेत्र में शेखावाटी भाषा बोली जाती है ।
लोक-साहित्य-राव शेखाजी एवं उनके वंशजों द्वारा लोक साहित्य का सम्मान एवं संरक्षण प्रदान किया गया। उनके शासन के दौरान अनेक साहित्य लिखे गये जिनके प्रभाव कालान्तर में भी रहा है।

शेखावतों में अनेक कलम के धनी विद्धान हुऐ हैं। उन्होंने अपने साहित्य से समाज को जागृत करने का कार्य किया। शेखावत शासक शिवसिंह डुण्लोद के शासन काल वि.स. 1865-1905 में अनेक राजस्थानी काव्यों- देव पच्चीसी, पलक दरियाद, प्रीति कालिमा, रामाश्वमेघ, शिव वंदना, स्तुतियां, सामुद्रिक ग्रंथ आदि की रचना की गई। भूरसिंह मलसीसर ने वि.स. 1935–1989 में विविध संग्रह, महाराणा जसप्रकाश, श्लोक संग्रह आदि काव्यों की रचना की थी। कल्याणसिंह खाचरियावास द्वारा लिखित प्रकृति का सौन्दर्य - गद्य, शुक्ल और सोफिया, मदन कुमार - नाटक, समय दर्शन - गद्य, आनन्द की पगडण्यिां प्रमुख हैं। इन्होंने डिंगल भाषा में दोहे और सोरठों का संग्रह भी किया। आयुवानसिंह हुडील का क्षत्रिय संस्कृति सेराव विशेष योगदान रखता है। इन्होंने मेरी साधना, हमारी ऐतिहासिक भूलें, ममता व कर्तव्य, राजपूत और भविष्य, हठिला राजस्थान -पद्य आदि कृतियों की रचना की है। साहित्यकारों एवं इतिहासकारों की कड़ी में सुरजनसिंह शेखावत - झाझड़, सवाईसिंह शेखावत-धमोरा, सौभाग्यसिंह शेखावत- भगतपुरा, देवीसिंह - मण्डावा, रघुनाथसिंह कालीपहाड़ी आदि साहित्यकारों ने शेखावत समाज में अग्रणी भूमिका निभाई है।

अनेक लोक गाथाओं के अंतर्गत राजपूत गौरव का वर्णन किया गया है। वर्तमान काल में भी अनेक राजपूतों के उपनाम सूर्यवंशी होते हैं। उपनाम पृथक होने पर भी अधिकांश शेखावत स्वयं को सूर्य देव के वंशज ही निरूपित करते हैं।

चित्रकला- सन् 1914 में भूरसिंह शेखावत - पीलानी ने चित्रकारी का कार्य प्रारम्भ किया। ये यथार्थवादी एवं नवयथार्थवादी चित्रकार थे। इन्होंने सन् 1947 में बम्बई जे.जे स्कूल के से आर्टस डिप्लोमा किया तथा मर्मज्ञ ग्लेडसन, सोलोमन एवं सी. आर. जेआर्ड के सानिध्य में कला सजृन किया। सूरतसिंह झेरली - पीलानी व्यंग्य चित्रकार के रुप में विख्यात हुऐ ।

ब्लू पॉटरी- मऊ गांव के कृपालसिंह शेखावत देश के विख्यात कलाकार थे। कृपालसिंह शेखावत कला की शिक्षा शांति निकेतन जैसे प्रसिद्ध कला संस्थान से ली थी। जापान के टोक्यों विश्वविद्यालय से ओरियंटल आर्ट में डिप्लोमा किया। शांति निकेतन में उन्होंने भारतीय कला परम्पराओं की बारीकियों को सिखा तथा जापान में जापानी चित्रकला में प्रयुक्त प्राकृतिक रंगों, स्याही एवं कागज से जुड़ी तकनीकी का अध्ययन किया। इन्होंने जयपुर से लुप्त होती ब्लू पॉटरी को नया जीवन दिया । ब्लू पॉटरी मिट्टी के बर्तन पर नीले स्याही के रंगों स नक्काशी करके बनाई जाने वाली कला है। यह कला अकबर के समय ईरान से लाहौर आई थी।

जयपुर नरेश महाराजा रामसिंह इसे लाहौर से जयपुर लाये थे। जयपुर की ब्लू पॉटरी को पुनर्जीवीत करने में कृपालसिंह शेखावत का योगदान है। इन्होंने 25 रंगों का प्रयोग कर नई शैली बनाई, जिसे 'कृपाल शैली' कहा गया। इसके लिए इन्हें सन् 1974 में पद्मश्री एवं 1980 में कलाविद् की उपाधि दी गई।

राजपूतों की लोक कला एवं लोक संगीत से सम्बद्ध परम्पराओं में कठपुतली नाच एवं कथाकारों द्वारा गाई जाने वाली वीर गाथाएँ अभी भी प्रचलित हैं। काष्ट एवं मिट्टी के कार्य में भी वे पारंगत होते हैं। इनके द्वारा बनाई जाने वाली प्रतिमाएँ लोगों के आकर्षण का केन्द्र होती हैं।

धर्म एवं पर्व- कछवाहों द्वारा हिन्दू धर्म का पालन किया जाता है। वर्तमान में, धार्मिक प्रथाओं के अंतर्गत, राजपूत अन्य उच्च जाति वाले हिंदुओं से पृथक कहे जा सकते हैं। वे औपचारिक तथा आनुष्ठानिक उद्देश्यों हेतु ब्राह्मणों की सेवाएँ प्राप्त करते हैं। कछवाहा शेखावतों द्वारा समस्त प्रमुख हिंदू देवी-देवताओं की पूजा की जाती है। अधिकांश शेखावतों द्वारा सूर्य देव और दुर्गा माँ की देवी के रूप में भी पूजा उपासना की जाती है। इनकी कुल देवी शाकम्भरी माता, करणी माता की पूजा करते हैं।

राजपूतों द्वारा हिन्दुओं के समस्त प्रमुख पर्व एवं त्यौहार मनाए जाते हैं। इसमें नवरात्रि एवं दशहरा का पर्व विशेषतः उल्लेखनीय है । यह पर्व माँ दुर्गा को समर्पित है। राजपूतों की परम्परा के अनुसार माँ दुर्गा के समक्ष भैंस के बछड़े की बलि दी जाती थी जो महिषासुर नामक असुर पर माँ दुर्गा की विजय के उपलक्ष्य में दी जाती थी । बछड़े की तलवार के एक ही वार से गर्दन काटकर बलि दी जाती थी। इसके मांस का वितरण प्रायः सेवक अथवा निम्न जाति वर्ग के मध्य किया जाता था। वर्तमान काल में बलि प्रथा समाप्त हो गई है।

लोक प्रथाएँ- शेखावत समाज के लोग विवाह, उत्सव आदि के समय सती की देवली को पूजते हैं तथा गाँव की जनता भी इन स्थानों को पूजती है। प्रारम्भ में इस समाज में सती प्रथा का प्रचलन था। अनेक स्थानों पर आज सती चबूतरों व उनके स्थानों को पूज्य भाव के साथ देखा जाता है तथा इन स्थानों में वर्तमान में भी मेले लगते हैं।

शेखावतों द्वारा विवाह समारोह उत्सव और त्यौहारों के अवसर पर भगवान गणेश का आवाहन किया जाता है। भगवान गणेश के स्थल वर्तमान में प्रत्येक छोटे, बड़े गाँव में मिलते हैं। इनके गीत से ही विवाह का प्रारम्भ होता है और इन्हीं की जय-जय ध्वनि से ही वैवाहिक कार्यों की समाप्ति होती है। राजपूतों के साथ-साथ अन्य जातियों के लोग भी विभिन्न समारोहों विशेषतः विवाह के दौरान गणेश मंदिर में पूजा अर्चना हेतु जाते हैं।

शौर्य गीत की प्रथा वर्तमान में भी यथावत रूप से जारी है। इन गीतों से ग्रामीणों की रगों में ओज एवं वीरता पूर्ण भाव उत्पन्न होते हैं और वे गौरव से भर उठते हैं। मूलतः यह गायन युद्ध की सम सामयिक प्रवृत्ति का परिचायक है। यह मुख्यतः गाँव की चौपालों में गाया जाता है।' राजपूतों द्वारा वर्तमान समय में भी अपने शस्त्रों का पूर्व काल के समान ही आदर किया जाता है। उल्लेखनीय है कि अन्य जातियों द्वारा भी शेखावतों का अनुकरण करते हुए शस्त्र पूजा की जाने लगी है।

वस्त्र- पारम्परिक रूप से राजपूत पुरुष धोती पहनते हैं, जिसमें कमर के चारों ओर सफेद कपड़े का बड़ा टुकड़ा बंधा होता है, जिसे पैरों के मध्य से निकालकर कमर में खोंसा जाता है। इसे प्रायः कुर्ते के साथ पहना जाता है। राजपूत पुरुष एक छोटी जाकेट अर्थात् अंगरखा भी पहनते हैं, जो दाईं ओर से बांधी जाती है। राजपूत पुरुषों द्वारा सिर पर पगड़ी धारण की जाती है जिसे वे अपने कुल की पहचान के रूप में निरूपित करते हैं। राजपूत महिलाओं द्वारा राजपूती लूगड़ी तथा लहंगा पहना जाता है जो कि शेखावाटी का पारम्परिक महिला वस्त्र है। त्यौहारों या विशेष उपलक्ष्यों के दौरान तो अनिवार्य रूप से पारम्परिक वस्त्र ही धारण किए जाते हैं। स्पष्ट है कि परम्परा एवं आधुनिकता के सामंजस्य को राजपूतों द्वारा बनाए रखा गया है।

खान-पान- आज भी कछवाहा शेखावतों में खान-पान के क्रम 'थाल' परोसने की अवधारणा सुनने को मिलती है। इस प्रकार के थाल इतिहास काल में सोने-चांदी के हुआ करते थे। वर्तमान में राजपूतों का खान-पान क्षेत्र के अनुसार परिवर्तित होता रहा है।" कम वर्षा वाले क्षेत्रों में, उनकी खुराक में मुख्यतः रोटी, दालें एवं सब्जियाँ शामिल होते हैं। राजपूतों को शिकार के शौकीन के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त है । वे विभिन्न पक्षियों का शिकार कर उन्हें खाना पसंद करते थे, जैसे बकरा, मुर्गा, भैंसा, तीतर आदि। वर्तमान में शिकार प्रतिबंधित है अतः अब यह सम्भव नहीं है परंतु फिर भी राजपूत खान-पान अत्यंत प्रसिद्ध है ।

सांस्कृतिक धरोहर- राजपूतों का हिन्दू धर्म में विजेता के रूप में आकलन किया जाता है। शेखावाटी क्षेत्र में इन्होंने सशक्त पहचान कायम की है। इनमें भाट जाति द्वारा परिवार के अभिलेखों को कायम रखा जाता है और इसके द्वारा वंशावली के माध्यम से अनेक पीढ़ियों के पूर्वजों के विषय में ज्ञात किया जा सकता है। चारण वंश के राजपूत राजपूत शासकों के कृत्य एवं उपलब्धियों से सम्बंधित अभिलेख संग्रहित करते हैं। राजपूत दरबार संस्कृति के केंद्र हुआ

करते थे, जहाँ साहित्य, संगीत, नृत्य, चित्रकला एवं मूर्तिकला ने राजपूत श्रोष्टि वर्ग की सहायता से प्रसिद्धि प्राप्त की । राजपूत चित्रकला की एक विशिष्ट पद्धति है प्रायः जिसके केंद्र में धार्मिक विषय-वस्तु, लघुचित्र होते हैं। पृथ्वीराज रासो जैसी अनमोल साहित्यिक कृति वर्तमान में भी प्रसिद्ध है जिसमें राजपूत राजाओं की वीरता का वर्णन है। पंद्रहवीं शताब्दी में मीराबाई जो एक राजपूत राजकुमारी थी, को हिन्दू भक्ति साहित्य में अमूल्य योगदान के लिए आज भी याद किया जाता है ।

शेखावत शासकों द्वारा नहरों, बांधों एवं जलाशयों का निर्माण किया गया। शेखावाटी क्षेत्र में अनेक प्रसिद्ध मंदिरों का निर्माण कराया गया। कुछ प्रसिद्ध महल एवं किले हैं, सीकर दूर्ग, खेतड़ी का बागौरगढ़ एवं भोपालगढ़, लक्ष्मणगढ़ का दूर्ग, झुन्झुनू का खेतड़ी महल आदि । इन सभी का ऐतिहासिक महत्व वर्तमान में भी हैं और आज भी ये सभी स्थल आकर्षण के केंद्र हैं ।

उपसंहार:

वीर शेखा के इस प्रदेश ने जहां देश के लिए अपने प्राणों का बलिदान देने वाले देशप्रेमी दिये वहीं उद्योग एवं व्यापार को बढ़ावा देने वाले सैकड़ों उद्योगपति तथा व्यापारी दिये हैं, जिन्होंने लाखों लोगों को रोजगार देकर देश की अर्थव्यवस्था में अपना योगदान दिया । वर्तमान शेखावाटी क्षेत्र पर्यटन और शिक्षा के क्षेत्र में विश्व मानचित्र पर तेजी से उभर रहा है। यहां पिलानी लक्ष्मणगढ़ भारत प्रसिद्ध शिक्षा केन्द्र हैं। वहीं नवलगढ़, गंगियासर, अलसीसर, मलसीसर, लक्ष्मणगढ़, बलौदा, मंडावा आदि स्थानों पर बनी बड़ी-बड़ी प्राचीन हवेलियां अपनी विशालता और भित्ति चित्रकारिता के लिए विश्व प्रसिद्ध हैं, जिन्हें देखने के लिए बड़ी संख्यां में देशी-विदेशी पर्यटक आते हैं। पहाड़ों में सुरम्य स्थानों पर बने जीण माता मन्दिर, शाकम्भरी माता मन्दिर, लोहागर्ल तीर्थ धाम, खाटूश्यामजी मन्दिर, सालासर हनुमानजी मन्दिर, कंकडेऊ कला में बाबा माननाथ की मेड़ी, डाबड़ी धीरसिंह में बालाजी महाराज का प्रसिद्ध मन्दिर, शेखावाटी का एकमात्र भौमिया जी का मन्दिर आदि धार्मिक आस्था के ऐसे केन्द्र हैं, जहां दूर-दूर से श्रद्धालु दर्शनार्थ आते हैं।

संदर्भ ग्रंथ:

1. मिन्टम, लेघ–द राजपूतज़ ऑफ खालापुर, इंडिया, विली न्यूयॉर्क, 1966, पृ.स. 52
2. कालीपहाड़ी, रघुनाथसिंह शेखावाटी प्रदेश का राजनीतिक इतिहास, पृ.स. 2
3. मण्डावा, देवीसिंह- राजपूत शाखाओं का इतिहास, पृ. स. 33
4. कालीपहाड़ी, रघुनाथसिंह - शेखावत और उनका समय, पृ. स. 513-517
5. पालीवाल, देवीलाल राजपूत कुलों का इतिहास, मंगल प्रकाशन, जयपुर, पृ.स. 96
6. ढेंगुला, डॉ. रामप्रसाद -2010, पृ.स. 365
   बुन्देलखण्ड के परमार, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल,
7. गुप्त, नर्मदा प्रसाद - आल्हा खण्ड शोध समीक्षा, साहित्य अकादमी, छतरपुर, 1983, पृ.स 133-128
8. पालीवाल, देवीलाल-राजपूत कुलों का इतिहास, मंगल प्रकाशन, जयपुर, पृ.स. 181